अहिंसक मानव सभ्यता के पक्ष में

प्रेम सिंह

टुकड़े टुकड़े हो बिखर चुकी मर्यादा
उसको दोनों ही पक्षों ने तोड़ा है
पांडव ने कुछ कम कौरव ने कुछ ज्यादा
यह रक्तपात अब कब समाप्त होना है . . .

('अंधा युग', धर्मवीर भारती)

1

रूस-उक्रेन युद्ध समाप्त होने का नाम नहीं ले रहा है। अलबत्ता, युद्ध ससे जुड़े विविध पहलुओं पर नेताओं, कूटनीतिज्ञों, विशेषज्ञों, अधिकारियों, विद्वानों, सामान्य नागरिकों की ओर से निरंतर वक्तव्य, चर्चा, और लेखन जारी है। इस सारी कवायद की युद्ध के कारणों, निहितार्थों, प्रभावों, परिणामों आदि के विवेचन में जो भी सार्थकता बनती हो, युद्ध को रोकने के मामले में वह निरर्थक सिद्ध हुई है। ऐसा लगता है आधुनिक हिंसक सभ्यता को नेताओं एवं कूटनीतिज्ञों ने ही नहीं, युद्ध पर अपना पक्ष रखने वाले तरह-तरह के विशेषज्ञों और विद्वानों ने भी विकल्पहीन स्वीकार किया हुआ है। यह भी कहा जा सकता है कि उन्हें यह सभ्यता हिंसक लगती ही नहीं है। संयुक्त राष्ट्र महासचिव कहते हैं कि रूस-उक्रेन युद्ध इक्कीसवीं सदी की आधुनिक सभ्यता में एक विसंगति है, एक बुराई है। गोया यह विससंगती, बुराई कहीं ऊपर से आन पड़ी है; उसका उस विश्व-व्यवस्था से कुछ लेना-देना नहीं है, जिसकी केंद्रीय संस्था के वे महासचिव हैं!

संयुक्त राष्ट्र संघ के महासचिव से लेकर पोप तक की शांति की अपील रूस-उक्रेन युद्ध की विभीषिका में झुलस कर तत्काल दम तोड़ देती है। मैंने युद्ध की शुरुआत में 'रूस-उक्रेन युद्ध: क्यों कारगर नहीं होते नागरिक प्रतिरोध?' शीर्षक लेख लिखा था। लेख में नागरिक समाज के सामने आधुनिक हिंसक सभ्यता के विकल्प के रूप में आधुनिक अहिंसक सभ्यता के संभावित विकल्प पर गंभीरता से और समग्रता में विचार करने का सुझाव रखा था। उस लेख पर प्राय: लोगों ने ध्यान नहीं दिया। बल्कि 'मेनस्ट्रीम वीकली' जैसी पत्रिका को भी वह लेख 'आउटडेटिड' लगा। प्रस्तुत लेख पहले लेख की अगली कड़ी के रूप में लिखा गया है।

युद्ध के विरोध में होने वाले नागरिक प्रतिरोध कभी के समाप्त हो चुके हैं। उक्रेन के नागरिकों की मौतों, कष्टों और विस्थापन पर मानवीय संवेदना जताने का सिलसिला भी थम चुका है। इस युद्ध के प्रमुख खिलाड़ी रूस, अमेरिका, यूरोपीय देश और नाटो युद्ध के बाद स्थायी शांति (लास्टिंग पीस) कायम करने के दावे परोस रहे हैं। अमेरिका, यूरोपीय देश और नाटो बताना

चाह रहे हैं कि ज्यादा से ज्यादा हथियारों का निर्माण और खरीद-फरोख्त तथा नाटो का ज्यादा से ज्यादा देशों में विस्तार स्थायी शांति की गारंटी है। रूस यह मान कर चल ही रहा है कि उसने उक्रेन के पीछे खड़ी ताकतों को भविष्य के लिए सबक सिखा दिया है। इक्कीसवीं सदी के पिछले दो दशकों पर ही नजर डालें तो इराक, अफगानिस्तान, सीरिया, यमन, आर्मेनिया-अजरबैजान, उक्रेन के युद्धों-गृहयुद्धों के बीच स्थायी शांति हासिल करने के दावों का खोखलापन स्वयंसिद्ध है।

रूस ने युद्ध में उक्रेन का साथ देने वाले देशों को धमकी दी है कि वे इसका नतीजा भुगतने के लिए तैयार रहें। रूस-उक्रेन युद्ध की शुरुआत से ही तीसरे महायुद्ध के खतरे से लेकर परमाणु हमले तक के अंदेशे जताए जा रहे हैं। अंतर्राष्ट्रीय संबंध, खास कर आर्थिक-व्यापारिक मामलों में, जिस तरह से परस्परता के बजाय प्रतिस्पर्धात्मक होते जा रहे हैं, स्थायी शांति की बात छोड़िए, यथासंभव शांति भी एक असंभावना लगती है। अगर रूस-उक्रेन युद्ध के बाद दुनिया वास्तव में एक-ध्रुवीय के सस्थान पर फिर से दो-ध्रुवीय या बहु-ध्रुवीय होने जा रही है, उससे युद्ध और हथियारों का निर्माण और कारोबार नहीं रुकने जा रहा है। रूस-उक्रेन युद्ध को लेकर अमेरिका-विरोधी काफी मुखर हैं। अमेरिका के ज्यादातर विरोधी अंदरखाने 'अमेरिकावाद' के शिकार होते हैं। उनका अमेरिका-विरोध किसी अन्य देश को अमेरिका जैसा शक्तिशाली देखने की दमित इच्छा से परिचालित होता है। शिखर पर अमेरिक रहे या रूस, या चीन - हथियार होंगे तो वे अपना युद्ध खोज लेंगे, और युद्ध होंगे तो वे अपने हथियार खोज लेंगे। दरअसल, विश्व-व्यवस्था में जब तक शिखर-संस्कृति रहेगी तब तक शांति कायम हो ही नहीं सकती।

2

स्थायी शांति के लिए एक अहिंसक मानव सभ्यता के निर्माण की दिशा में सच्चे प्रयास जरूरी हैं, इस बोध से आधुनिक औद्योगिक सभ्यता का नियंता और संचालक दिमाग लगभग खाली नज़र आता है। आप चाहे राजनैतिक नेतृत्व पर नजर डाल लीजिए, चाहे कूटनीतिक नेतृत्व पर, चाहे सैन्य नेतृत्व पर, चाहे बिज़नेस नेतृत्व पर और चाहे इंटेलीजेंसिया पर। दुनिया भर के मेहनतकशों की कमाई पर हर तरह की सुविधाओं से पूर्ण जीवन जीने वाला यह शासक-वर्ग प्रचलित हिंसक सभ्यता का मुखर या मौन समर्थक है। चाहें तो इसमें फिल्म, खेल, फैशन, संगीत, नृत्य, पोपुलर लेखन आदि विभिन्न क्षेत्रों के सेलिब्रेटीयों को भी शामिल कर सकते हैं। इनमें से ज्यादातर जाने-अनजाने हिंसक सभ्यता के वाहक होते हैं। वरना आधुनिक मनुष्य का जीवन चारों तरफ से अनेक प्रकार के हथियार बनाने, बेचने और इस्तेमाल करने की होड़ से इस कदर नहीं घिरा होता। आधुनिक मनुष्य के शरीर ही नहीं, आत्मा पर तरह-तरह के मैटल और विस्फोटकों का जिरह-बख्तर चढ़ा दिया गया है। और वह खुश है कि उसने मानव सभ्यता की अभी तक की श्रेष्ठतम अवस्था प्राप्त कर ली है! इस दौड़ में दुनिया के जो हिस्से पीछे

छूट गए हैं, बल्कि जिनकी कीमत पर यह हिंसक सभ्यता कायम हो पाई है, उन्हें निर्देश है कि वे लगातार उस अवस्था को प्राप्त करने की दिशा में दौड़ते रहें।

हथियार और बाज़ार के दो मजबूत पहियों पर दौड़ती आधुनिक हिंसक सभ्यता के निवासियों की शांति की कामना में कमी नहीं है। बाह्य कलह से आक्रांत लोग आंतरिक शांति हासिल करने के उद्देश्य से तरह-तरह के उपाय करते पाए जाते हैं। यह एक पूरा कारोबार बन चुका है, जो इस हिंसक सभ्यता में फल-फूल रहा है। यहां दावा होता है कि अंदर की शांति से ही बाहर की शांति आएगी। अंदर की शांति तभी संभव है, जब आप बाहर की दुनिया से अपने को अप्रभावित रखें। (यानि उसका भोग तो भरपूर करें, लेकिन उसे चुनौती देने या बदलने की जरूरत नहीं है।) इस कारोबार में बहुत से संतो-महात्माओं, दार्शनिकों-लेखकों, धर्मगुरुओं, नेताओं, यहां तक कि कतिपय वैज्ञानिकों के वचनों को उद्धृत किया जाता है। आधुनिक मनुष्य को तरह-तरह के ध्यान और योग के माध्यम से भी शांति और प्रशांति हासिल कराने का भी एक पूरा वैश्विक तंत्र फैला हुआ है। इसके साथ शांति दिवस, शांति पुरस्कार, शांति सम्मलेन, शांति दूत जैसी गतिविधियां वैश्विक संस्थाओं, गैर-सरकारी संस्थाओं और सरकारों के तत्वावधान में आयोजित होती रहती हैं।

इन गतिविधियों के संचालन के तार मुख्यत: अमेरिका के साथ जुड़े होते हैं, जिसकी बुनियाद ही नहीं, अस्तित्व भी हिंसा पर टिका है। शांति के इस पूरे कारोबार के बीच दुनिया के अलग-अलग कोनों में युद्ध, गृह-युद्ध, गुरिल्ला-युद्ध, नस्ली-युद्ध, आतंकी-युद्ध चलते रहते हैं। कहने की जरूरत नहीं कि हिंसक सभ्यता ने अपने बचाव में यह समस्त कारोबार फैलाया हुआ है। लोग यह नहीं समझ पाते कि स्थायी शांति हिंसक सभ्यता का आतंरिक गुण नहीं हो सकती।

3

ऐसा नहीं है कि हिंसक सभ्यता के अंतर्गत हिंसा के सवाल पर चिंतन नहीं होता है। वह खूब हुआ है। युद्ध से जुड़ी हिंसा के अलावा अन्य कई तरह की सरंचनागत हिंसाओं का महत्वपूर्ण विचारकों ने उल्लेख किया है। लेकिन हिंसक सभ्यता के बरक्स अहिंसक सभ्यता का कोई ठोस/सगुण चिंतन नहीं होने के चलते, हिंसा से जुड़े गंभीर चिंतन के बावजूद हिंसक सभ्यता का ही फैलाव होता चलता है। पूंजीवाद और पूंजीवादी साधनों और प्रक्रिया को अपना कर कायम किये जाने वाले समाजवाद, और साथ ही वर्तमान दौर के कारपोरेट पूंजीवाद की उत्तर-समीक्षा (पोस्ट क्रिटीक) काफी होती है। लेकिन उसके बावजूद सुरसा की तरह खुले हिंसक सभ्यता का मुंह एक पल के लिए भी बंद नहीं हो पाता।

हिंसक सभ्यता बगैर उपलब्धियों के नहीं है। उसके अपने काफी गहरे आकर्षण हैं, जो पूर्व की सभ्यताओं में उतने प्रकट नहीं रहे हैं। वह मनुष्य की लालच, घृणा, बदला, वर्चस्व-स्थापन, रोमांच, साहसिकता जैसी मनोवृत्तियों को हवा देने के साथ, उसे भोगवाद का एक अभूतपूर्व लोक उपलब्ध कराती है। उसके पास यह विशेषज्ञता है कि शोषित और पीड़ित भी अपने को हिंसक सभ्यता का स्वाभाविक सदस्य मानता है। उसे उम्मीद रहती कि एक दिन वह भी दूसरों को ध्वस्त करेगा, और सम्पूर्ण भोग की स्थिति को प्राप्त करेगा। हिंसक सभ्यता का पुरोधा पूंजीवाद दूर-दराज दुनिया के पिछड़े से पिछड़े गली-मुहल्लों में उतर कर अपनी जनता बनाता चलता है। आधुनिक हिंसक सभ्यता की जड़ें गहरी और फैली हुईं हैं। उसकी कहानी अनंत और अपार है। शायद यही कारण है कि अहिंसक सभ्यता से जुड़ा जो भी चिंतन आधुनिक या आधुनिक-पूर्व युगों में हुआ है, वह जड़ नहीं पकड़ पाता। ऐसा चिंतन, जैसा कि गांधी ने कहा है, जिसमें अर्थशास्त्र को नीतिशास्त्र और नीतिशास्त्र को अर्थशास्त्र नियमित करता हो।

4

पूरे विश्व में अहिंसक सभ्यता के निर्माण से प्रेरित चिंतन के पर्याप्त सूत्र मिलते हैं। उनमें गांधी का चिंतन आधुनिक हिंसक सभ्यता का एक गंभीर और सुचिंतित विकल्प प्रस्तुत करता है। उन्होंने एक न्यायाय-पूर्ण मानव सभ्यता का दर्शन प्रस्तुत करने के साथ, उसे प्राप्त करने की कार्य-प्रणाली (मोड ऑफ क्शन) भी दी है। डॉ. राममनोहर लोहिया ने अन्याय के प्रतिरोध की गांधी की सिवल नाफरमानी की कार्य-प्रणाली को मानव इतिहास की अभी तक की सबसे बड़ी क्रांति बताया है। विश्व के कई कार्यकर्ताओं/नेताओं ने अपने संघर्ष में गांधी की कार्य-प्रणाली का उपयोग किया है।

यह गांधी की ताकत भी है, और कमजोरी भी कि वे दुनिया के उपनिवेशित हिस्से में पैदा हुए। ताकत इसलिए कि उपनिवेशित हिस्से में पैदा होने के बावजूद उन्होंने आधुनिक हिंसक सभ्यता के शुरुआती चरण उपनिवेशवाद का विरोध करते हुए अपना मौलिक चिंतन विकसित किया। कमजोरी इसलिए कि उपनिवेशित हिस्से का चिंतक होने के चलते उन्हें वैसी पहचान और महत्व नहीं मिल सका, जैसा उपनिवेशवादी हिस्से में पैदा होने वाले चिंतकों को मिला। उपनिवेशवाद के मूल में आर्थिक शोषण के साथ यह धारणा भी बद्धमूल थी कि गुलाम बनाए गई आबादियों को अज्ञान के गर्त से बाहर निकालना एक ईश्वरीय कर्तव्य है। लिहाजा, एक मुकम्मल विकल्प प्रदाता के रूप में गुलाम देश के निवासी गांधी का ग्रहण हो ही नहीं सकता था। अलबत्ता उपनिवेशवादी हिस्से के कई सामान्य और विशिष्ट लोगों ने वैकल्पिक चिंतक और नेता के रूप में गांधी का स्वीकार किया। उनमें से कई गांधी के संघर्ष के साथ जुड़ भी गए थे।

गांधी ने अपने चिंतन के सूत्र सभी उपलब्ध स्रोतों से लिए थे। 'हिन्द स्वराज' की संदर्भ ग्रंथ-सूची में दो भारतीय लेखकों - दादाभाई नौरोजी और आरसी दत्त - का उल्लेख है। बाकी सभी लेखक - टॉल्सटॉय, शेरार्ड, कार्पेंटर, टेलर, ब्लाउन्ट, थोरो, रस्किन, मैजिनी, प्लेटो, मैक्स नार्दयू - भारत के बाहर के हैं। गांधी के बाद अहिंसक सभ्यता के निर्माण की दिशा में कई महत्वपूर्ण विद्वानों ने चिंतन किया है। उनमें कई नए मार्क्सवादी भी हैं। नंदकिशोर आचार्य ने लिखा है, "अब तो मेजोरस, लेबोविट्ज़ और टेरी इगलटन जैसे नए मार्क्सवादी विचारक भी विकेंद्रीकृत प्रौद्योगिकी और उत्पादन-व्यवस्था की बात करने लगे हैं, जिस पर न कॉरपोरेट का नियंत्रण हो, न राज्य का, मेजोरस भूमंडलीकरण को 'बेरोजगारी का भूमंडलीकरण' कह कर व्याख्यायित करते है। इसका हल उत्पादन-शक्तियों के विकाल्प में ही हो सकता है, जो उत्पादन के साथ-साथ वितरण की समस्या का भी समाधान अंतर्निहित किए है। दरअसल, स्वदेशी प्रौद्योगिकी और उससे प्रसूत अहिंसक उत्पादन संबंधों के कारण पूंजी का शोषणपरक केंद्रीकरण संभव ही नहीं रहता और लाभ के न्यायपूर्ण वितरण अर्थात आर्थिक समता का आदर्श भी बड़ी हद तक स्वयमेव ही लागू हो जाता है। सत्य और अहिंसा, गांधी के अनुसार, केवल व्यक्तिगत गुण ही नहीं माने जाने चाहिए, बल्कि उनका सामाजिक-आर्थिक प्रतिफलन उद्देश्यों में ही नहीं प्रक्रिया में भी अर्थात, साध्य के रूप में ही नहीं, साधन के रूपों में भी दिखाई देना चाहिए।" ('गांधी है विकल्प', प्राकृत भारती अकादमी, जयपुर, 2021, पृष्ठ 49-50)

गांधी के समकालीन और उत्तरवर्ती चिंतकों के चिंतन से अहिंसक सभ्यता की एक रूपरेखा बनती है। लेकिन यह अफसोस की बात है कि रूस-उक्रेन युद्ध को लेकर चलने वाली समस्त बहस में उस तरफ बिल्कुल ध्यान नहीं दिया जा रहा है।

इस संदर्भ में भारत की स्थिति बहुत ही खराब है। भारत में किसी भी आधुनिक नेता को आधुनिक औद्योगिक सभ्यता की गांधी की समीक्षा और उसके विकल्प के चिंतन पर विश्वास नहीं था। वे उपनिवेशवादी देशों जैसा भारत बनाना चाहते थे। आज भी कमोबेश वही स्थिति है। बल्कि वर्तमान सरकार के शासन में न केवल हिंसक सभ्यता की दिशा में अंधी छलांगें लगाई जा रही हैं, गांधी की हत्या को जायज ठहराने का एक पूरा आख्यान गढ़ा और फैलाया जा रहा है। कुछ लोग गांधी के फ़ोटो पर गोलियां दाग कर उनकी फिर-फिर हत्या करने का विचित्र सुख लेते हैं। ऐसे कई लोग आपको मिल जाएंगे हैं जो कहते हैं कि गांधी आज जिंदा होता तो वे खुद उसे गोली मार देते।

जाहिर है, मृत गांधी पर इस सब का कोई फर्क नहीं पड़ता है। अलबत्ता, देखने की बात यह है कि 'गांधी का भारत' बहुस्तरीय हिंसा का अखाड़ा बना हुआ है। लोहिया ने लिखा था, "बीसवीं सदी के पूर्वार्द्ध ने दो नए अविष्कारों को जन्म दिया, परमाणु बम और और महात्मा गांधी और सदी का उत्तरार्ध इन दोनों के बीच चुनाव करने के लिए संघर्ष करेगा और कष्ट सहेगा।"

अब इक्कीसवीं सदी के दो दशक बीत चुके हैं। क्या आधुनिक मनुष्य ने परमाणु बम का चुनाव करके कष्ट सहने का फैसला कर लिया है? या उसके मन के एक कोने में अहिंसक मानव सभ्यता की स्थापना का संकल्प पहले की तरह सक्रिय है? अगर ऐसा है तो हिंसक सभ्यता पर मानव जिजीविषा की जीत जरूर होगी।

(समाजवादी आंदोलन से जुड़े लेखक दिल्ली विश्वविद्यालय के पूर्व शिक्षक हैं)